

तीर्थकर ऋषभदेव

जंबूद्वीप के दक्षिण में स्थित भरतक्षेत्र में तीसरे आरे के पूर्ण होने में जब चौरासी लाख पूर्व और तीन वर्ष साढ़े आठ पक्ष शेष थे, तब आषाढ कृष्ण चतुर्थी की मध्यरात्रि में मुनि वज्रनाभ का जीव सर्वाधीरिद्र नामक अनुत्तर विमान से च्यवन कर, कुलकर नाभिराय की धर्मपत्नी मरुदेवी की कुक्षि में अवतरित हुआ। इसी रात्रि में माता मरुदेवी ने चौदह स्वप्नों के दर्शन किये। माता मरुदेवी ने जब अपने पति नाभिराय को इन स्वप्नों के बारे में बताया तो वे बोले - 'देवी! तुमने जो स्वप्न देखे हैं, वह बहुत ही दिव्य और शुभ हैं। हमें शीघ्र ही उत्तम संतान की प्राप्ति होने वाली है।'

प्रभु का जन्मकल्याणक

गर्भकाल नौ मास और साढ़े सात दिन बीत जाने के पश्चात् चैत्रमास के कृष्ण पक्ष की अष्टमी को अर्धरात्रि में मरुदेवी ने एक युगल को जन्म दिया। प्रभु के जन्म होते ही सर्वत्र आनंद मंगल छा गया। तीनों लोकों में प्रकाश का उद्योत होने लगा। नारकी जीवों को भी एक पल के लिए सुख का अनुभव हुआ। आकाश में देवदुंदुभि बजने लगी। पृथ्वी पर मेघ सुगंधित जल की वर्षा करने लगे। चारों ओर खुशहाली छा गई। पक्षी खुश होकर चहकने लगे।

छप्पन दिक्गुमारियों ने अपने अवधिज्ञान से तीर्थकर परमात्मा के जन्म को जानकर विनीता नगरी में पहुँचकर सूतिका कर्म किया। मंगल गीत गाए और अपना आशीर्वाद देकर चली गईं।

सौधर्म देवलोक में इन्द्र का सिंहासन कंपायमान होने लगा। अवधिज्ञान से ज्ञात हुआ कि कुलकर नाभिराय के यहाँ आदि तीर्थकर का जन्म हुआ है। इन्द्र ने अपना सिंहासन त्याग कर प्रभु के जन्म की दिशा के सममुख सात-आठ कदम चलकर चैत्यवन्दन की मुद्रा में बैठकर नमस्तुणं का पाठ कर प्रभु को वन्दना की। इन्द्र के आदेश से सेनापति हरिणगमैषी ने सुघोषा नामक घंटनाद तीन बार किया। सुरपति ने मरुदेवी माता के पास आकर, उन्हें प्रणाम कर प्रभु के जन्माभिषेक के लिए माता को अवस्थापिनि निद्रा में सुला दिया। प्रभु का एक बिंब रखकर मेरुपर्वत पर स्थित पांडुक वन की ओर चले। यहाँ अतिपांडुक शिला पर रखे सिंहासन पर प्रभु को अपनी गोद में लेकर बैठ गये। यहाँ अच्युतेन्द्र ने अपने सामानिक, आत्मरक्षक, लोकपाल आदि देवों के साथ अहोभाव से परमात्मा का स्नात्र प्रारंभ किया। बाल्यकाल में एक वर्ष बीत गया, तब देवलोक के अधिपति सौधर्मन्द्र ने कुल का नामकरण इक्ष्वाकु वंश किया।

युवा होने पर सुनंदा व सुमंगला के साथ ऋषभ का विवाह हो गया। कुछ समय पश्चात् सुमंगला ने भरत और ब्राह्मी युगलों को जन्म दिया। इसी तरह सुनंदा ने बाहुबली व सुन्दरी युगल संतानों को जन्म दिया। कुछ समय पश्चात् सुमंगला ने अनुक्रम से उनचास पुत्र युगल अर्थात् 98 पुत्रों को जन्म दिया।

लगभग बीस लाख वर्ष पूर्व बीतने के पश्चात् ऋषभ इस पृथ्वी के पहले राजा बनें और प्रजा को अग्नि, मणि, कृषि का ज्ञान दिया। अवधिज्ञान से नवलोकान्तिक देवों ने प्रभु की दीक्षा लेने की भावना जानी तो उन्होंने प्रभु से प्रार्थना की - 'हे प्रभु! आप धर्मतीर्थ की स्थापना कर जीवों के मोक्ष जाने का मार्ग प्रशस्त करें।' प्रभु ने दीक्षा अंगीकार से एक वर्ष पूर्व सांवत्सरिक दान दिया।

एक वर्ष बीत जाने पर चैत्र मास के कृष्ण पक्ष में अष्टमी के दिन प्रभु ऋषभदेव सुदर्शन नामक शिबिका में आरूढ़ हुए। सिद्धार्थ नामक उद्यान में प्रभु ने पंचमुष्टि केश लुंचन करके सिद्धों को नमस्कार कर चारित्रधर्म को अंगीकार किया।

साधिक एक वर्ष तक प्रभु ऋषभ मौनपूर्वक आर्य-अनार्य देश में निराहार विहार करते गजपुर (हस्तिनापुर) नगरी पधारे। यहाँ बाहुबली के पौत्र श्रेयांसकुमार का शासन था। श्रेयांसकुमार को जातिस्मरण ज्ञान हुआ। श्रेयांसकुमार ने इक्षुरस को ब्रह्मण करने की प्रार्थना की। इक्षुरस से प्रभु का पारणा हुआ, वह दिन वैशाख मास की शुक्ल तृतीया का था, जो आज अक्षय तृतीया के रूप में मनाया जाता है।

प्रभु ऋषभदेव ने एक हजार वर्ष तक अनेक प्रकार के अभिग्रह धारण कर मौनपूर्वक आर्य व अनार्य देश में विहार किया। प्रभु विहार करते हुए विनीता नगरी की पुरिमताल नामक उपनगरी में पधारे। यहाँ वटवृक्ष के नीचे कायोत्सर्ग मुद्रा धारण कर ध्यान में लीन हो गये। फाल्गुन मास की कृष्ण एकादशी को प्रातःकाल चार घाति कर्मों का नाश कर प्रभु ने केवलज्ञान को प्राप्त किया।



SCAN QR CODE

